सप्तम अध्याय

"विवेच्य उपन्यासों में चित्रित दलित चेतना"

सप्तम अध्याय

"विवेच्य उपन्यासों में चित्रित दलित चेतना"

विषय प्रवेश :

'जयप्रकाश कर्दम' दलित संवेदना के मार्मिक चितरे एवं यथार्थ के निष्पक्ष द्रष्टा तथा सृजनकार है। दलितों के मसीहा डॉ.बाबासाहब अम्बेड़कर जी के समाज चिंतन तथा दर्शन ने दलितों में 'स्व' अस्मिता को पहचानने की ललक पैदा की। उनके विचारों से प्रेरित हिंदी दलित साहित्यकारों की लेखनी दलित उत्थान तथा वैचारिक जागृति के प्रति प्रतिबद्ध रहीं हैं। अम्बेडकरवादी विचारों के अनुयायी जयप्रकाश कर्दम जी के साहित्य सृजन का प्रयोजन दलित चेतना की अभिव्यक्ति का सशक्त द्योतक है। उन्होंने अपने विवेच्य उपन्यासों में मानवीय संवेदनाओं स्वतंत्रता का अधिकार समतामूलक समाज की स्थापना, पारस्परिक बंधुत्व भाव उत्पन्न करने और वर्ण व्यवस्था से मुक्त होकर स्वाभिमानी जीवन जीने की दलित समाज में जागृति की है। इन विवेच्य उपन्यासों के प्रतिपाद्य विचार उनकी सामाजिक दलित चेतना को समझने के लिए युक्ति संगत हैं। अत: जयप्रकाश कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों में निहित दलित चेतना का विस्तृत विवेचन तथा विश्लेषण यहाँ इस प्रकार प्रस्तुत हैं -

7.1 दलित शब्द से तात्पर्य :

शब्द कोशों में 'दलित' शब्द का अर्थ इस प्रकार दिया हुआ हैं -

'नालन्दा विशाल शब्द सागर' कोश में दलित शब्द का अर्थ -

मसला, रौंदा या कुचला हुआ। नष्ट किया हुआ।"[1] ऐसा दिया गया है।

मानक हिंदी कोश' में दलित शब्द का अर्थ -

जिसका दलन हुआ है। जो कुचला, दला, मसला या रौंदा गया हो। टुकड़े-टुकड़े किया हुआ। जो दब गया हो अथवा जिसे पनपने या बढ़ने न दिया गया हो। हीन-अवस्था में पड़ा हुआ। ध्वस्त या नष्ट किया हुआ।"[2] ऐसा बताया है।

मराठी के 'वाङ्मयीन संज्ञा संकल्पना कोश' में 'दलित' शब्द का अर्थ -

"हिंदू धर्मनि ज्यांना बहिष्कृत मानले ज्यांच्यावर हजारों वर्ष अन्याय झाला माणूस म्हणून जगणे ज्यांना नाकारले गेले जगण्याचा हक्का दिला गेला नाही ते दलित"[3]

इसका अनुवाद है -

("हिंदू धर्म ने दलित को अस्पृश्य मानकर उनपर हजारों वर्ष अन्याय किया, उन्हें मानव के रूप में जीने नहीं दिया, जीने का हक छिन लिया गया, वे दलित हैं।)

डॉ.सुमनासार के मतानुसार दलित शब्द से तात्पर्य -

"दलित शब्द आक्रोश, चीख, वेदना, पीड़ा, चुभन, घुटन और छटपटाहट का प्रतीक हैं।"[4]

डॉ.मोहनदास नैमिशराय के मतानुसार दलित शब्द से तात्पर्य है -

"दलित शब्द उस व्यक्ति के लिए प्रयोग होता है जो समाज व्यवस्था के तहत सबसे नीचली पायदान पर है। वर्ण व्यवस्था ने जिसे अछूत या अन्त्यज की श्रेणी में रखा। उसका दलन हुआ। शोषण हुआ इस समूह को ही संविधान में अनुसूचित जातियाँ कहा गया है, जो जन्मत: अछूत हैं।"[5]

उक्त विवेचन में 'दलित' शब्द पर विविध शब्दाकोशों तथा विद्वानों के द्वारा प्रकाश डालने के पश्चात स्पष्ट होता है कि जिसका दलन और दमन हुआ है, जिसे दबाया गया है। उत्पीड़ित,शोषित,सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ,मसला हुआ, कुचला हुआ, वंचित किया गया है। इसे दलित कहा जा सकता है।

7.2 'चेतना' शब्द की व्युत्पत्ति :

'चित्' धातु से 'ल्युट' (अन्) प्रत्यय के योग से 'चेतना' शब्द की व्युत्पति हुई है, जिसका अर्थ परिवेशगत तथा स्वयंगत तत्वों का ज्ञान है। अत: चेतना का संबंध मानव की आंतरिक शक्ति 'चित्' से है। वस्तुत: चेतना 'चित्' का सकारात्मक गुण है।

7.2.1 'चेतना' शब्द का अर्थ :

आधुनिक युग में 'चेतना' शब्द केवल मनोविज्ञान तक ही सीमित न रहकर उसका व्यापक स्वरूप दर्शन द्रष्टव्य है। चेतना समाजविज्ञान, राजनीतिशास्त्र, नीतिशास्त्र, धर्मशास्त्र आदि का भी विषय बना है। 'चेतना' शब्द का अधिक प्रयोग मनोविज्ञान के क्षेत्र में किया है। अत: विविध शब्द कोशों में 'चेतना' शब्द के अर्थ इस प्रकार दृष्टिगोचर है -

हिंदी के 'नालन्दा विशाल शब्दसागर कोश' में चेतना का अर्थ है -

"बुद्धि, मनोवृत्ति, ज्ञानात्मक मनोवृत्ति, स्मृति, सुधि, चेतनता, होश, विचारणा, समझना।"[6] आदि।

मराठी शब्दकोश में चेतना का अर्थ है -

"चेतना, चैतन्य, ज्ञान।

प्राणशक्ति, जीवनी शक्ति।

पौरूष, जनशक्ति।

आकलन शक्ति, ग्रहन शक्ति।[7] आदि

अंग्रेजी के ऑक्सफर्ड डिक्शनरी में चेतना शब्द का अर्थ -

चेतना ः अंग्रेजी शब्द "Conscious – ness का हिंदी पर्याय हैं।

"Con-scious – awak aware, knowing things because one is using the bodily senses and mental powers,

"Consciousness – All the ideas thougths feeling wishes intentions recollection of a person of persons."[8]

अत: 'चेतना' शब्द के हिंदी, मराठी, अंग्रेजी शब्द कोशों में निहित अर्थ से ज्ञात होता हैं कि 'चेतना' का अर्थ प्रेरणा, ज्ञात होना, विद्रोह, जागरुकता आदि रहा है। समाज व्यवस्था और मानवी जीवन का एक महत्वपूर्ण पहलु 'चेतना' है। अर्थात चेतना प्राणशक्ति विश्व की स्पंदन शक्ति या वैश्विक तत्व है। अत: चेतना मानवी

जीवन के मर्म की खोज का संकेत है।

7.2.2 चेतना की परिभाषाएँ :

'चेतना' एक अमूर्त तत्व है। वह मानव के अंतरंग की शक्ति का द्योतक है। चेतना का मानवी जीवन में महत्त्व स्वीकार करते हुए चेतना का स्वरूप विश्लेषित करने का तथा उसे पारिभाषित करने का प्रयास विभिन्न विचारकों ने किया हैं। चेतना की निश्चित परिभाषा करना संभव नहीं है। किन्तु 'चेतना' शव्द का अर्थ जानने के साथ-साथ साहित्य में परिलक्षित चेतना की परिभाषा से परिचित होना भी महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

'चेतना' शब्द का सर्व प्रथम प्रयोग विलियम जेम्स नामक तवज्ञ ने सन् **1884** में किया था और इसकी परिभाषा करते हुए कहा था कि - "प्रसंग, घटना, क्रिया, परिस्थिति बाहय हलचल आदि ऊपरी बातें हैं। मनोव्यापारों में चलनेवाली प्रक्रिया ही वास्तव में प्रेरक शक्ति है।"[9]

जर्मन के प्रसिद्ध विश्लेषणवेत्ता मनोविज्ञानी सी.जी.युंग ने चेतना का व्यापक उल्लेख किया है कि - "सारी चेतना जो व्यक्ति विशेष की न होकर एक ही काल में अनेकानेक व्यक्तियों अथवा संपूर्ण मानव जाति की संपत्ति होती है।"[10]

7.2.3 'चेतना' निर्मिती के कारण तथा स्वरूप एवं महत्त्व :

'चेतना' की व्युत्पत्ति 'चित्' धातु से हुई है। यह निरंतर परिवर्तनशील प्रवाहमयी रहती है। 'चेतना' एक जीवन शक्ति का द्योतक है जिसका केंद्रविंदु मानव का मस्तिष्क है। चेतना व्यक्ति के विचारों से निर्मित होती है। चेतना के चेतन अचेतन और अवचेतन ये तीन स्तर व्यक्ति के शरीर से संबंधित रहते हैं। अर्थात चेतना में होनेवाली क्रियाए मनुष्य के शरीर को प्रभावित करती है। अत: चेतना समस्त सृष्टि का आधार है। चेतना एक अनवरत चलनेवाली प्रक्रिया है जो मनुष्य, समाज और समय से भी अलग नहीं की जा सकती। इस दृष्टि से चेतना मानव अस्तित्व के सहज स्वरूप के

उद्घाटन में सहायक है। चेतना व्यक्ति विशेष में निहित एक ऐसी ईकाई है जो व्यक्ति, समाज, राष्ट्र को गतिशील करती है।

'चेतना' मानवी विकास का केंद्रबिंदु है। विज्ञान के अनुसार 'चेतना वह अनुभूति है जो मस्तिष्क में पहुँचलेवाली अभिगामी आवेगों से उत्पन्न होती है। यह वह शक्ति है जिसके माध्यम से मनुष्य स्वयं को और अपने आस-पास के परिवेश को समझने तथा उसका मूल्यांकन करें। 'चेतना' सामाजिक यथार्थ में सांस्कृतिक स्वरूप प्रतीकों मूल्यों विचारों और आदर्शो की भूमिका उद्घाटित करती है। अत: इसे तीन भागों में विभाजित किया है - 1 ज्ञानात्मक चेतना 2 भावात्मक चेतना 3 क्रियात्मक चेतना आदि। इन तीनों तथ्यों से सशक्त 'चेतना' का निर्माण होता है।

7.3 विवेच्य उपन्यासों में चित्रित दलित चेतना :

'चेतना' से मनुष्य और समाज का असली अंतरंग उद्घाटित होता है। संसार में मानवी जीव विचारशील प्राणी है। तथा मानवी जीवन परिवर्तनशील एवं संघर्षमयी प्रवाह हैं। मानव अपने अस्तित्व के प्रति सचेत रहकर जीवनयापन करता है। सृष्टि में जीव और चेतना का संबंध अटूट रहा है। अर्थात मानवी जीवन के साथ चेतना सदैव रही है। चेतना वह प्रवृत्ति है जो मानवी जीव को सतत चेतित तथा उत्तेजित करती है। चेतना एक ऐसी प्रेरक शक्ति है, जो मानवी अन्याय के खिलाफ संघर्ष करती है। चेतना के कारण ही मानव अपने निश्चित लक्ष्य तथा तत्वों के साथ समेटकर चलने का प्रयास करता है। दलित चेतना का सरोकार इस प्रश्न से बहुत गहराई तक जुड़ा है कि 'मैं कौन हूँ?' मेरी पहचान क्या है?' भारतीय समाज व्यवस्था में हजारों साल जिन लोगों के साथ अन्याय, अत्याचार, शोषण, विषमता जैसा बर्ताव किया उन्होंने अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए समय के साथ-साथ विद्रोह किया उसे चेतना या 'स्व' जागृती के अर्थ में लिया गया।

समाज में जागृती, आत्मभाव चैतन्य पौरुषत्व की भावना पैदा करनेवाली धारा 'चेतना' ही है। सामाजिक उत्थान में चेतना ही महत् कार्य करती है। अत: दलित

समाज में उत्पन्न चेतना नई विचारधारा नये समाज व्यवस्था का ही प्रमाण है। चेतना क्रांति का प्रतीक है। साहित्य में इसी संकल्पना के रूप में चेतना को स्पष्ट किया है। वर्तमान समय में दलित समाज का यथार्थ जीवन साहित्य के चिंतन का केंद्रिय विषय बना हुआ हैं।

जयप्रकाश कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों 'करुणा' तथा 'छप्पर' में चित्रित दलित चेतना का विवरण तथा विश्लेषण यहाँ इसप्रकार द्रष्टव्य है -

7.3.1 आर्थिक चेतना :

भारतीय समाज व्यवस्था में अर्थ प्राप्ति का साधन 'कृषि' महत्त्वपूर्ण पहलु है। भारतीय समाज में गाँव की अर्थव्यवस्था कृषि पर निर्भर है। समाज व्यवस्था के विशिष्ट वर्ग के पास आर्थिक संपन्नता के कई साधन उपलब्ध है, किन्तु दलित समाज के पास शारीरिक श्रम के सिवा कोई भी साधन नहीं। प्राचीन काल से समाज व्यवस्था के तहत जमींदारी प्रथा के कारण सेठ, साहुकार, महाजनों ने गाँवों की सारी भूमि पर अपना अधिकार जताकर उन्होंने दलित समाज का आर्थिक शोषण किया है। अत: आर्थिक सत्ता का केंद्र समाज के विशिष्ट वर्ग के पास परंपरा से संचित रहा।

समाज में मानव विकास के विविध आयामों में व्यक्ति की आर्थिक स्थिति महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। समाज में किसी भी व्यक्ति की सामाजिक प्रतिष्ठा उसकी आर्थिक स्थिति से निश्चित होती है। अत: व्यक्ति तथा समाज के विकासोन्मुख उन्नयन के सारे स्त्रोत 'अर्थ' में निहित है। 'अर्थ की मानवी जीवन में महत्ता के बारे में 'कुमारी प्रिया अम्बिका जी का मत है कि "अर्थ ही समाज की शिराओं में बहनेवाला वह रक्त है जो संपूर्ण समाज के जीवन को सम्यक रूप में संचालित करता है।"[11] अर्थात अर्थ से अलग रहकर समाज की स्वतंत्र सत्ता नहीं हो सकती।

वर्तमान समाज व्यवस्था में कृषि, मजदूरी के साथ-साथ कारखाने, शिक्षा, नौकरी, व्यापार और राजनीति जैसे कई क्षेत्र अर्थ प्राप्ति के प्रमुख साधन बने हैं। वर्तमान समय में दलित समाज अपने दारिद्रय, पीड़ा, दु:ख, अभावग्रस्त जैसे कारणों को

समझ रहें हैं। वे आर्थिक स्तर सुधार के अपने जीवन में परिवर्तन के नये मार्ग, नयी विचारधारा आत्मसात कर रहें हैं। हमारी आर्थिकता ही हमारी सारी समस्याओं का समाधान कर सकती है।

अत: समाज में व्यक्ति के सभी क्रिया-व्यापारों का क्रियान्वय करना समुचित अर्थ व्यवस्था द्वारा ही हो सकता है। अर्थ व्यवस्था की विकासशील स्थितियाँ ही समाज के जन-जीवन में चेतना जगाने का प्रबल माध्यम होती है। 'अर्थ' जीवन में सर्वस्व तो नहीं किन्तु 'अर्थ' के बिना भी मानवी जीवन समृद्ध नहीं।

वर्तमान समय में चारों ओर बेकारी, बेरोजगारी, दारिद्रय फैला हुआ है किन्तु इसका समाज का विशिष्ट वर्ग ही शिकार बना है जिसमें दलित समाज का समावेश अधिक मात्रा में होता हैं। दलित समाज के आर्थिक स्तर सुधार हेतु भारतीय संविधान में कई प्रावधानों को स्थापित किया गया है। इसमें दलितों की आर्थिक स्थिति के विकास हेतु सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू के रूप में शिक्षा अपनी अहम भूमिका निभाती है। आज के युग में शिक्षित समाज ही अपना विकास साध सकता है। समाज का विकसित होना आर्थिक शोषण से मुक्ति भी है। सन् **1932** के पश्चात दलितों के मसीहा डॉ.बाबासाहब अम्बेड़कर ने पिछड़े वर्ग का आर्थिक स्तर विकसित करने के लिए दलित वर्ग को शिक्षित बनाने पर जोर देने का प्रयास किया। दलित समाज सुधारकों के साथ-साथ दलित साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से दलित समाज में वैचारिक जागृति हेतु लेखनी चलायी है उसमें दलित जीवन दर्शन के यथार्थ रूप को उजागर करके उनमें आर्थिक आत्मनिर्भरता की चेतना जगायी है। इसी पृष्ठभूमि पर कर्दम जी के विवेच्य उपन्यासों में उभरी दलित चेतना पर हम विचार करेंगे -

जयप्रकाश जी के 'छप्पर' उपन्यास का नायक चंदन एक दलित मजदूर किसान की इकलौती संतान है। वह स्वयं अपने जीवन में शिक्षा का मूल्य जानकर आर्थिक परिस्थिति से त्रस्त होते हुए भी उसपर हावी होकर उच्चशिक्षित बनता है। चंदन दलित समाज की सामाजिक क्रांति का प्रतीक है। वह स्वयं दलित होने कारण दलितों के

आर्थिक परिस्थितियों से परिचित होने के हेतु वे इसके मूल कारणों को जानकर दलित समाज की आर्थिक स्थिति में परिवर्तन लाने हेतु कार्यरत रहता हैं। चंदन दलित समाज की आर्थिक प्रगति में शिक्षा को महत्त्व देकर उनमें चेतना जागृत करता है। उन्हें उनके आर्थिक अधिकारों की ओर प्रेरित करता है। दलित समाज को अपमान, शोषण और अन्यायपूर्ण दरीद्री जीवनयापन न करना पड़े इसलिए अपने बच्चों को शिक्षित करने के लिए प्रेरित करता है। चंदन शिक्षा को आर्थिक स्थिति के सुधार में वर्तमान युग की आवश्यकता बताता है।

चंदन समझ गया है कि आधुनिक युग में अर्थ का बल सर्वोपरी है। सामाजिक जीवन को प्रगतिशील बनाने में अर्थव्यवस्था का अहम् स्थान है। नियोजित आर्थिक प्रगति देश तथा समाज की सामाजिक व्यवस्था की चेतना को गति प्रदान करती है। इसलिए चंदन अपने समाज के आर्थिक विकास में योग्य साधनों की परिपूर्ति के साथ समाज में जागृति करता है। जिसके बल दलित समाज आर्थिक शोषण से मुक्त होकर समृध्दि की ओर बढ़े। चंदन दलितों को कठोर परिश्रम एवं शिक्षा के महत्त्व को भी समझाता हैं। वह दलित समाज के लोगों से कहता है - "जिनकी आमदनी कम होगी वे लोग और ज्यादा मेहनत करके ओवरटाईम आदि लगाकर अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं।"[12] चंदन शिक्षित दलित युवकों में चेतना जागृत करता है जिससे प्रभावित होकर चंदन का मित्र रामाहेत कहता है कि "मैं बिजनेस करूँगा और अधिक से अधिक पैसा कमाऊँगा।"[13] यहाँ विकासाभिमुख आर्थिक चेतना के दर्शन होते हैं।

गाँव में दलित मजदूर अपने उदारनिर्वाह के लिए शारीरिक श्रम का साधन के तौरपर उपयोग करके पूरी निष्ठा और ईमानदारी से मेहनत करते हैं किन्तु उनके मेहनत का उचित मूल्य उन्हें नहीं दिया जाता। चंदन इन दलित मजदूरों के कठोर परिश्रम के उचित मूल्य तथा महत्त्व से अवगत कराता है। दलित मजदूरों के जीवन का आधार श्रम की महत्ता उन्हें समझाकार उनके आर्थिक अधिकारों के प्रति उन्हें जागृत करता है। परिणामत: दलित मजदूर अपने मालिकों से उचित मजदूरी की माँग करते हैं किन्तु

जमींदारों तथा पूँजीपति लोग इस माँग को नकारते हैं।

जिससे ये गरीब लोग शहर की ओर निकलते है क्योंकि शहर के मिलों कारखानों में गाँव की मजदूरी की अपेक्षाकृत उचित मूल्य मिलता है। अत: भूमिहीन खेत मजदूर गाँव के घुटन भरे माहौल से बाहर निकल कर आर्थिक आत्मनिर्भर बनने के लिए स्वच्छंद वातावरण में सांस लेने के लिए प्रेरित हो रहे हैं। शहरों की ओर अर्थप्राप्ति के लिए जाने की यह चेतना आज सर्वत्र देखने को मिलती है।

उक्त विवेचन से इस बात का संकेत मिलता है कि दलित समाज आर्थिक स्थिति से दयनीय होने के कारण युग चेतना के मुताबिक आर्थिक संपन्नता की ओर बढ़ने का प्रयास कर रहा हैं।-

7.3.2 नारी चेतना :

संसार में नारी जाति का इतिहास बहुत पुराना है। वह त्यागी, कर्मशीला, नवोन्मेषी है वास्तव में भारतीय संस्कृति में नारी का महत्त्व अनन्यसाधारण है। भारतीय समाज व्यवस्था पुरूष प्रधान होने के कारण परंपराओं, नीतिनियमों में नारी का शोषण शारीरिक मानसिक, बौद्धिक आदि सभी स्तरों पर हमेशा होता आ रहा है। नारी को अबला समझकर पुरूषवर्ग हमेशा नारी पर अन्याय करता रहा है। सच्चाई यह है कि मनुष्य की परंपरा को सुरक्षित रखने की केंद्रिय भूमिका नारी द्वारा निभाने पर भी वह समाज की परिधि के बाहर है और केंद्र में पुरूष सत्ता। संसार में नारी के सहयोग, त्याग, सहिष्णुता, ममता, सृजनशीलता के बिना संसार के गति का चक्र नहीं चल सकता। अत: नारी समाज की आधारशील है। नारी का समाज में स्थान वताते हुए डॉ.शशीभूषण सिंहल इस बात की ओर संकेत करते हैं कि - "नारी समाज का महत्त्वपूर्ण अंग है किसी भी समाज की श्रेष्ठता का निर्णय मुख्यत: समाज में नारी की स्थिति पर निर्भर रहती है। नारी समाज की उन्नति, अवनति का द्योतक बन जाती है।"[14] अत: समाज में एक ओर नारी को सृष्टि की आधार देवी, माँ और श्रद्धा एवं सम्मान के पात्र कहा जाता है, तो दूसरी ओर दलित नारियों को प्रस्थापित सवर्ण समाज खिलौना समझता है।

भारतीय समाज व्यवस्था में दलित नारी दोहरे शोषण से पीड़ित है,एक तो वह दलित होने के नाते सवर्णो के हाथों और स्त्री होने के कारण पुरूष प्रधान संस्कृति से।

दलित नारी शोषण के बारे में डॉ.अर्जुन चव्हाण कहते है कि - "यौन शोषण तो नारी जीवन का अभिशाप है, जिसे वह सदियों से ढोती आ रही है। ऊपर से अगर वह दलित नारी हो तो क्या कहें?उसके लिए दोहरा अभिशाप। वह शोषण ही शोषण को बर्दाश्त करती आई,औरत होने के कारण मर्द से और दलित होने के दर्द से।"[15]

अत: यह परिलक्षित होता है कि नारी जीवन का प्रवास दु:ख भरी व्यथा कथा रहा है। प्रस्थापित व्यवस्था में नारी के अधिकारों को महत्त्वहीन समझा है।

भारतीय समाज व्यवस्था में प्राचीन काल से पुरूष मानसिकता से पीड़ित शोषित तथा उपेक्षित, अत्याचारित नारी के उत्थान हेतु स्वतंत्रता पूर्व तथा पश्चात समाज सुधारकों के प्रयासों के फल स्वरूप शिक्षा को आत्मसात कर नारी विकसित हो रही है। नारी स्वातंज्य के इतिहास में महात्मा जोतिबा फुले, सावित्रीबाई फुले, राजा राममोहन राय, गोपाळ गणेश आगरकर, राजर्षी शाहू महाराज, डॉ बाबासाहब अम्बेड़कर जैसे समाज सुधारकों ने नारी स्वतंत्रता की वकालत की है। भारतीय संविधान में भी नारी उत्थान हेतु कई प्रावधनों को स्थापित किया है जो वर्तमान समय में नारी उसके बल पर प्रगति पथ पर अग्रेसर हो रही है। समाज में नारी चेतना के फैलाव में शिक्षा, नारी मुक्ति आंदोलन, जनजागृति का प्रसार एवं कानूनों और नियमों के कारण नारी में आत्मनिर्भरता दृष्टिगोचर होने लगी। समाज सुधारकों द्वारा नारी उत्थान हेतु किये गय महत् कार्यो से समय के साथ-साथ नारी जीवन मूल्यों में परिवर्तन आने से नारी में नवचेतना निर्माण होकर पुरूषों की बराबरी या समस्यानुकूल अन्याय का विरोध भी वह करने लगी हैं।

वर्तमान समय में नारी में अपने अधिकार बोध के कारण अस्तित्व बोध से चेतना पनप रही है। शिक्षा ने तथा भारतीय संविधान ने नारी जगत में जागृति कर उसे

नई मानसिकता प्रदान कर दी है। आज नारी के अस्मिता बोध पर प्रहार हुआ तो वह अपने अस्तित्व के प्रति सचेत रहकर उसका डटकर विरोध करती है। समाज सुधारकों के साथ-साथ साहित्यकारों ने भी अपनी रचनाओं के माध्यम से नारी को उसके अधिकारों के प्रति जागृत किया है। समाज व्यवस्था में किसी जाति के स्वाभिमान को ध्वस्त करने के लिए उनकी महिलाओं पर बलात्कार किया जाता है। दलित स्त्रियों का सवर्णोंद्वारा दैहिक शोषण इसी विकृत मानसिकता का प्रतिफल है।

नारी चेतना की इसी विस्तृत पृष्ठभूमिपर हम जयप्रकाश जी के विवेच्य उपन्यासों में नारी चेतना की तलाश करेंगे। जयप्रकाश कर्दम जी के 'छप्पर' उपन्यास में एक दलित मजदूर हरिया की इकलौती संतान कमला है। वह बलात्कार ग्रस्त होने के कारण कुआरी माता की यातना भरी जिंदगी जीती है जो समाज के उच्चवर्ग द्वारा प्रताड़ित, अत्याचारित नारी है।

'कमला' उसपर हुए बलात्कार के पश्चात बच्चे के प्रति माँ की ममता से उसका पालन-पोषण करती है। उसे पढ़ा-लिखाकर बड़ा करने की सोचती है ताकि उसपर हुए अन्याय के खिलाफ कमला बड़े निर्धार के साथ कहती है कि "अब यही मेरा सहारा है। बड़ा होकर यह मेरे साथ हुए जुल्म और अत्याचार का बदला ले यही मेरी कामना है।"[16] यहाँ नारी चेतना के दर्शन होते है।

दुनिया में कमला जैसी कई युवतियाँ है जिन्हें उच्चवर्गीय समाज निम्नवर्ग की नारीयों को अपनी वासना की तृप्ति का मात्र साधन समझता है। वर्तमान समय में सामाजिक जागृति के कारण अन्याय, अत्याचार का विरोध हो रहा है। नारी अपने 'स्व' तथा स्वतंत्रता को लेकर सोच रही है। वह आत्मनिर्भर बन रही है। नारी परंपरा, रूढ़ियों की देहरी से बाहर कदम रख रही है। अत: महादेवी वर्मा जी के शब्दों में कहना सही होगा कि "भारतीय नारी जिस दिन अपने संपूर्ण प्राण देय से जाग सके उस दिन उसकी प्रगति को रोकना किसी के लिए संभव नहीं।"[17]

कमला की नारी शक्ति से चंदन परिचित होता है, साथ-ही-साथ उससे इसकी ताकत द्विगुणित होती है। वह स्वयं भी मानने लगता है कि "जब कमला नारी होकर शोषण और अत्याचार के खिलाफ लड़ सकती है तब पुरूषों को इस संघर्ष में और ज्यादा आगे आना चाहिए।"[18] अत: कमला चंदन के दलित आंदोलन में सहयोग देकर समाजकार्य के लिए स्वयं को समर्पित करती है। कमला की यह चेतना सवर्णो के अत्याचारों से उत्पन्न हुअी हैं।

वर्तमान समय में नारी चेतना संपन्न होकर अपने शोषण के खिलाफ बहुआयामी संघर्ष के लिए तत्पर है। आज नारी स्वतंत्रता के सभी क्षेत्रों में अपने अधिकारों की माँग कर रही है। समाज परिवार व्यक्तिगत स्तर पर आज की नारी स्वयं के अस्तित्व बोध के प्रति निश्चित सचेत दिखाई दे रही है। नारी मुक्ति-संघर्ष, नारी चेतना तथा आधुनिक बोध ने नारी जीवन और उसकी सोच को नई दिशा दी है। नारी समय के साथ-साथ शिक्षा से आत्मनिर्भर बनाकर अपने परंपरागत संस्कारों की जंजीरों को तोड़कर अपनी अस्मिता की नई पहचान बनाने में प्रयत्नशील द्रष्टव्य हैं। कमला की यहीं स्थिति है।

स्पष्ट है कि जयप्रकाश कर्दम जी के 'छप्पर' उपन्यास में कमला के बीच उभरी नारी चेतना को वाणी देने का काम किया है।

7.3.3 शिक्षा चेतना :

संसार में सभी व्यक्तियों का विकास शिक्षा पर ही निर्भर है। शिक्षा से व्यक्ति गतिशील प्राणवान, सजग एवं सुसंस्कृत बनता है। शिक्षा से तात्पर्य व्यक्ति को सभ्य या उन्नत बनाना है। शिक्षा एक ऐसा प्रकाश है जो हमें जीवन के विविध क्षेत्रों में पथ प्रदर्शन करता है। तमसों माँ ज्योतिर्गमय कही जानेवाली शिक्षा रूढ़ि परंपरा के अंधकार को छेद दे रहीं है। संस्कृत के विद्वान कुंतक का कहना सही है कि 'नवोन्मेशालिनी प्रतिभा' अर्थात कुछ नव निर्माण की योग्यता ही प्रतिभा है, जो ज्ञानार्जन से प्रतिभासंपन्न और चारित्र्य संपन्न भावना की निर्मिती होती है। मानवी जीवन के

प्रतिभा से नए-नए विचारों का उन्मेष होता है। अत: संसार में सभ्यता, संस्कृति, समाज, धर्म, विज्ञान, मानवता तथा संपूर्ण मानवविकास के लिए शिक्षा आधरभूत पहलू है। मानव मन में सहजता, सहिष्णुता, सहृदयता, संवेदनशीलता, मातृ-पितृ प्रेम, राष्ट्रीयता, दया, करुणा आदि भावों को जागृत कर उसका चरम विकास शिक्षा से संभव है। अत: सृष्टि में मानव जीवन का कल्याण शिक्षा का एक मात्र उद्देश्य है।

भारतीय समाज व्यवस्था में वर्ण व्यवस्था का प्रचलन है। धार्मिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में स्थित अधिकार, कर्तव्यों और कार्यों की दृष्टि से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शुद्र आदि वर्ग किये जाते हैं। इसमें ब्राहमणों द्वारा ज्ञानार्जन क्षत्रियों द्वारा शस्त्र-धारण, वैश्यों द्वारा व्यापार तथा शूद्रों द्वारा सेवा करना यह चतुवर्ण्य में श्रम-विभाजन का रूप प्रतीत होता है। अर्थात प्राचीन काल से भारतीय समाज व्यवस्था में ज्ञान के क्षेत्र में विशिष्ट वर्ण के लोगों का प्रबल वर्चस्व रहा है। सवर्ण खुद का स्वार्थ पाने की मनोवृत्ति से दलित समाज के शोषण हेतु अपनी हुकूमत चलाने के लिए दलितों को शिक्षा साधनों से वंचित रखते हैं और दलितों को दारिद्रय, पीड़ा, अभावग्रस्तता तथा अज्ञान की खाई में ढकेलकर अपने स्थानों पर विराजमान रहते हैं।

जयप्रकाश कर्दम जी के 'छप्पर' उपन्यास में शिक्षा विषयक चेतना के दर्शन होते हैं। उपन्यास का नायक चंदन एक दलित मजदूर किसान का बेटा है। वह उच्चशिक्षित युवक है तथा दलित समाज के उत्थान हेतु सामाजिक क्रांति लाना चाहता है। वह स्वयं दलित लोगों के जीवन के विकास हेतु शिक्षा की महत्ता से उन्हें परिचित कराता है। चंदन दलित समाज की दारिद्रयता की समस्याओं, यातनाओं, पीड़ाओं के कारणों को समझ चुका है। समाज की पिछड़ी जातियों का शोषण सदैव होता आ रहा है। इसे चंदन अच्छी तरह से जानता है। उसकी यह धारणा है कि शिक्षा प्राप्त करने से ही उनकी स्थिति में सुधार संभव है। चंदन स्वयं की पढ़ाई करते-करते दलितों के बच्चों को पढ़ाने का काम भी करता है क्योंकि वह जान गया है कि शिक्षा से दलितों के अज्ञान की दासता से मुक्ति हो सकती है। चंदन दलितों की शक्ति वनता है, अशिक्षितों को

शिक्षा देता है। उनकी निराशा तथा सदियों से अज्ञान की दासता को ध्वस्त करने की उनमें चेतना जागृत करता है। चंदन शिक्षा ग्रहण करके दलित समाज के प्रति कर्तव्यशील एवं एक जिम्मेदार व्यक्ति की तरह बर्ताव करता है जो वर्तमान समय में हर दलित शिक्षित युवक के लिए अनुकरणीय और प्रेरणादायी है। शिक्षा जीवन की दृष्टि से यथायोग्य संस्कार है। इन संस्कारों के आधारपर ही भविष्य में दलित समाज अपने बलबूते पर जीने योग्य होगा।अत: शिक्षा मानव के पूर्णत्व का आविष्कार है। यह धारणा लेकर चंदन कार्यरत रहता है।

डॉ.बाबासाहब अम्बेड़कर ने शिक्षा के प्रसार-प्रचार हेतु डिस्प्रेस्ड क्लास एज्युकेशन सोसायटी (1928), पीपल्स एज्युकेशन सोसायटी (1946) की स्थापना की। उनका उद्देश्य यही था कि दलितों के बच्चों को शिक्षा के द्वार खुले रहें ताकि उनकी प्रगति हो सके। इसके साथ ही शाहू, फुले जैसे अनेक विभूतियों ने शिक्षा क्षेत्र में दलितों को विशेष सहायता की महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इसी तथ्य को चंदन ने समझ लिया है और इसी मार्ग पर से गुजरते हुए वह दलितों को शिक्षा का महत्त्व बताता है।

'छप्पर' उपन्यास का चंदन सोचता है कि आज दलित समाज के शोषण का आधार क्या है, हमारे उत्थान और विकास में कौन से तत्व बाधक है, यह जानकर वह इस व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करने के लिए तैयार होता है। चंदन जीवन में शिक्षा की महत्ता के बारे में कहता है कि - "जीवन की लड़ाईयों को लड़ने के लिए शिक्षा सबसे ज्यादा मारक और शक्तिशाली शस्त्र है। शिक्षा ही उत्थान और विकास का आधार है।"[19] यहाँ अम्बेडकर जी की विचारधारा का प्रभाव लेखक पर लक्षित होता है।

शिक्षा के प्रसार-प्रचार के कारण दलित समाज वर्तमान समय में पुराने रीति-रिवाज परंपरा आदर्श को निरर्थक मानने लगा है। शिक्षा व्यक्ति समाज और राष्ट्र की प्रथम अनिवार्यता है, जो उसे मुलभूत अधिकारों में समावेश किया है। शिक्षा समाज तथा व्यक्ति का केंद्रबिंदू है। वह आत्मा और मन का परिपूर्ण विकास करके व्यक्ति में सर्वोत्कृष्ट गुणों की अभिव्यक्ति करना यह शिक्षा का उद्देश्य है। शिक्षित युवक तथा

समाज सुधारकों ने दलित समाज को शिक्षा का महत्त्व समझाकार उन्हें शिक्षित बनाकर समता, न्याय, स्वतंत्रता, बंधुता के अधिकारों के प्रति सचेत किया।

आज दलित समाज अपने बच्चों को शिक्षित बनाकर मानसिक, बौद्धिक, आर्थिक, राजनीतिक गुलामी से बाहर निकाल कर सुखी संपन्नता पूर्ण जीवन बीताने के लिए प्रयासरत है। दलित शिक्षा चेतना से आये परिवर्तन के बारे में डॉ.अर्जुन चव्हाण जी का मत उल्लेखनीय है कि "शिक्षा, विवेक, बुद्धि के बल पर दलित अब न झुकना चाहता है न अपमान सहना।"[20] इसी तथ्य को 'छप्पर' में वाणी मिली है।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जयप्रकाश कर्दम जी के 'छप्पर' उपन्यास में चित्रित दलित समाज में शिक्षा के प्रति चेतना तथा जीवन में शैक्षिक जागृति का चित्रण दृष्टिगोचर होता है।

7.3.4 धार्मिक चेतना :

भारतीय समाज में चातुवर्ण्य व्यवस्था में हिंदू संस्कृति, धर्म ग्रंथों में निहित तत्वों पर आधारित है। इस संस्कृति तथा समाज व्यवस्था के कर्ता धर्मगुरू बने। उन्होंने धर्म के मानवतावादी मूल्यों को धर्मग्रंथ से निकालकर अपने स्वार्थ हेतु गलत तत्वज्ञान को आरोपित किया है। भारतीय समाज व्यवस्था में प्रस्थापितों ने दलित समाज को शिक्षा के स्त्रोंतों से दूर रखकर उन्हें अज्ञान, दारिद्रय, अभावग्रस्तता की खाई में ढकेल दिया।

समय के साथ-साथ दलित समाज के सुधारकों के दलित उत्थान कार्यो से कई सालों की गुलामी में जकड़ा दलित समाज स्वेच्छा सांस ले रहा है। शिक्षा के प्रचार-प्रसार से दलित समाज में नवजागृति का निर्माण होने लगा। दलित समाज विज्ञाननिष्ठ बनने लगा। धर्म ग्रंथों के प्रति देखने के दृष्टिकोण में दलितों में परिवर्तन आया।

प्राचीन काल से दलित समाज के शोषण में धर्मग्रंथों का भी साधन के रूप में उपयोग किया गया। डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर ने हिंदू धार्मिक ग्रंथों का गहन अध्ययन कर उसमें निहित विचारों को वैज्ञानिक कसौटीपर परख कर उनमें मानवतावादी तत्वों को

जाँचा है। अमानवीय बातों पर चिंतन किया। दलितों में भय तथा हमेशा के लिए अछूत या गुलाम बने रहने के लिए चक्रव्यूह बनाया गया।

जातिभेद ओर छुआछूत जैसे अमानवीय जीवनमूल्यों की रखवाली करनेवाले धर्मग्रंथ मनूस्मृति को डॉ.बाबासाहब अम्बेड़कर ने **25** दिसंबर **1927** को जलाकर समतामूलक मानवी स्वातंत्र्य के संग्राम का प्रारंभ किया। वर्तमान समय में इन्ही विचारों से प्रेरित होकर शिक्षित दलित लोग समाज की धर्माधता को नष्ट करने के लिए प्रयासरत हैं। इसमें साहित्यकारों का भी योगदान रहा है।

प्रा.मा.म.देशमुख परिवर्तनवादी विचारधारा के वाहक धर्मग्रंथों के बारे में कहते हैं - "धमग्रंथों में चमत्कारिक, काल्पनिक तथा मनगंढत बातों पर लोगों की श्रद्धा है। वेद, शास्त्र, पुराण आदि धर्मग्रंथों में धर्म पंड़ितों ने अपने हित की बातों को लिखकर दलित समाज पर अपनी हुकूमत चलाई है, और आज भी यह वर्ग अंधश्रद्धा का फायदा उठाकर दलित जनों को फंसा रहे हैं तथा देश को दिशा हीन बना रहे है।"[21] अत: कहना होगा कि वर्तमान समय में भी शिक्षित समाज पुरातन मानसिकता से ग्रस्त है, किन्तु समाजसुधारकों तथा साहित्यकारों के परिवर्तनवादी विचारधारा से उनमें वैचारिक जागृति हो रही है। विवेच्य उपन्यास 'छप्पर' में उपर्युक्त बातों के प्रभाव को हम देख सकते है।

जयप्रकाश कर्दम जी के 'छप्पर' उपन्यास का शिक्षित दलित युवक चंदन दलित समाज के अज्ञान, दारिद्रय, पीड़ा, अभावग्रस्तता तथा गुलामी को यहाँ की धर्म व्यवस्था तथा धर्मग्रंथों को दोषी मानता है, तथा मानव शोषण के हथियार इन धर्मग्रंथों के बारे में अपने समाज में जागृति करते हुए कहता है कि - "धर्मग्रंथ ही हमारे शोषण और अत्याचार की जड़े हैं। इन जड़ों को उखाड़ फेंकने की जरूरत है। और उसके लिए जरूरी है, कि लोग अधिक से पढ़े ताकि इन धर्मग्रंथों में निहत अन्याय और असमानता के दर्शन को समझ सके तथा अन्याय, शोषण और असमानता के विरूद्ध संघर्ष करने के लिर स्वयं को तैयार कर सकें।"[22] यहाँ अम्बेडकरजी की विचारधारा का वहन कर्दम जी कर रहें है यह स्पष्ट होता है।

अत: उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जयप्रकाश कर्दम जी के 'छप्पर' उपन्यास में दलित अज्ञान लोगों में उभरी हुई धार्मिक चेतना के दर्शन होते हैं।

7.3.5 धार्मिक पाखंडता के खिलाफ चेतना :

भारतीय समाज व्यवस्था में धर्म के नाम पर पाखंडी लोगों का अज्ञानी लोगों पर प्रबल वर्चस्व रहा है। आम जनता के अज्ञान का लाभ उठाकर उन्होंने धर्म की आड़ में आर्थिक बौद्धिक, मानसिक शोषण करना पाखंडी, लोगों का परम कर्तव्य रहा है। धर्म के कर्ता तथा ईश्वर के प्रतिनिधि कहे जानेवाले पाखंडी पंडित, पुरोहित वर्ग हमारे समाज में प्रचुर मात्रा में है। निम्नवर्गीय समाज अज्ञान के कारण धर्म की पाखंडता के जाल में धसता जा रहा है।

भारतीय समाज व्यवस्था में किसी भी व्यक्ति की योग्यता उसके कर्म, गुण पर आधारित न होकर विशिष्ट जाति में जन्म लेने से निश्चित की जाती है, फिर चाहे वह व्यक्ति कितना ही अनैतिक आचरण वाला है। समय के साथ शिक्षित लोग इस पाखंडता का डट्कर विरोध करने के लिए तैयार हो रहें हैं। शिक्षित व्यक्ति अपना सामाजिक दायित्व समझकर दलित समाज को प्रगतिपथ पर अग्रेसर देखना चाहता है। 'छप्पर' उपन्यास में इसके सबूत मिलते हैं।

जयप्रकाश कर्दम जी के 'छप्पर' उपन्यास में पंडित, पुरोहित, अज्ञानी जनता का धर्म, ईश्वर आदि के नाम पर अपने स्वार्थ हेतु शोषण करते हैं, इसका पर्दाफाश किया है। इस उपन्यास का पात्र काणे पंडित को केवल ऊपरी तौर का धार्मिक ज्ञान है। वह लोगों की आँखों में धूल फेंककर अपने अस्तित्व की जड़ें मजबूत करना चाहता है। इस उपन्यास में काणे पंड़ित की वास्तविक दशा के संबंध में कहा है कि "पिता की मृत्यु के पश्चात यही पैतृक धंधा उसने भी आजीविका के लिए अपनाया। पढ़ा-लिखा इतना था नहीं कि कहीं नौकरी पा जाता और नौकरी के आलाव मेहनत-मजदूरी या कोई अन्य कार्य करना ब्राह्मण होने के नाते न तो उसके लिए सम्मान की बात थी और न ही सुविधाजनक। किसी और मुल्क या गैर जाति में पैंदा हुआ होता

तो भूखा मरता काणाराम। लेकिन धन्य हो भारत की समाज व्यवस्था कि ब्राह्मण भूखा मर ही नहीं सकता। व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक किसी-न-किसी रूप में ब्राह्मण उससे टैक्स वसूल करता है। वह जानता था कि पुरोहिताई के पेशे से लोगों को बेवकूफ बनाकर अपनी आजीविका मजे में चलाई जा सकती है।"[23]

'छप्पर' उपन्यास का नायक शिक्षित दलित युवक चंदन डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर जी के मूलमंत्र शिक्षा, संगठन, संघर्ष से प्रेरित होकर समाज व्यवस्था में चल रहें कर्मकांड और पंडित लोगों का विरोध करता है। चंदन अपने दलित समाज में वैचारिक जागृति करना, अपना प्रथम लक्ष्य तथा कर्तव्य समझता है। चंदन गाँव के पंडित पुरोहित के विरोध में जाकर अज्ञानी लोगों में नया विश्वास निर्माण करता है। चंदन उनसे कहता है - "पत्थर के इन देवी-देवताओं या भगवानों की पूजा - अर्चना करने या उनको भेंट चढ़ाने से कुछ भी होनेवाला नहीं है। इस सबका औचित्य नहीं है, सिवाय इसके कि इसके सहारे कुछ लोगों की आजीविका चलती है और उनको मेहनत करके कमाने की जरूरत नहीं पड़ती।"[24]

चंदन इन अज्ञान लोगों के यज्ञ अनुष्ठान पर किये जा रहें पैंसों से उनके जीवन सुधार हेतु खर्च करने की सलाह देता है। उनमें धार्मिक पाखंडता खिलाफ चेतना भरता है। वर्णव्यवस्था की आँच को सहनेवाले दलितों को शिक्षित बनाकर, संगठन के जरिए उनमें प्रस्थापित धर्म के ठेकेदारों तथा अडंबरों खिलाफ कार्य करता है।

7.3.6 सम्मानीत तथा स्वाभिमानी जिंदगी जीने की चेतना :

स्वाधीनता पूर्व और पश्चात भारतीय समाज व्यवस्था में प्रस्थापित वर्ण व्यवस्था के चक्रव्यूह में निम्नवर्ग पीसता रहा है। अपने अज्ञान के कारण वे अन्याय, अत्याचार सहकर जानवरों से भी बदतर जीवन बीताने के लिए मजबूर है। किन्तु समय के साथ दलित समाज में शिक्षा से आयी वैचारिक जागृति तथा सामाजिक परिवर्तन के कारण सभी व्यक्ति समाज में रहते हुए स्वाभिमानी एवं सम्मानीत जीवन बीताने के लिए सजग है।

जयप्रकाश कर्दम जी के 'छप्पर' उपन्यास में सुक्खा नामक दलित सर्वहारा मजदूर के माध्यम से इस चेतना को उभारा है। दलित मजदूर किसान सुक्खा चमार रूढ़ि परंपरा से चली आ रही गुलामी के जंजीरों को तोड़कर सम्मानित तथा स्वाभिमानी जीवन जीने की चाहत रखता है। सुक्खा स्वयं अनपढ़ है। किन्तु वह अपनी इकलौती संतान चंदन को उच्चशिक्षित बनाना चाहता है। वह चंदन को पढ़ाई के लिए शहर भेजता है जिससे मातापुर गाँव के सवर्ण लोग पंडित तथा ठाकुर हरनामसिंह उसका विरोध करते हैं। क्योंकि उन्हें डर है कि यह दलित लोग पढ़-लिखकर हमारे हुकूमत के खिलाफ विद्रोह न कर उठे। वे चंदन को अपने यहाँ क्लर्क बनाकर रखना चाहते हैं। वे चंदन की पढ़ाई में बाधा निर्माण करने का प्रयास करते हैं। किन्तु सुक्खा अपने बेटे के भविष्य को बनाने तथा उसे स्वाभिमानी जीवन जीने के लिए शिक्षा का मूल्य समझकर उसे उच्च शिक्षित बनाकर सदियों की गुलामी को छेद देने के लिए कठोर परिश्रम को अपनाकर गाँव के पंड़ितों की ठाकुरों की बातों को ठुकराता है। उन्होंने उनकी बात को न मानने के कारण सुक्खा के खिलाफ दूसरे दिन गाँव में भरी पंचायत में अन्यायकारक फैसला लिया। "सुक्खा को खेत-क्यार में घुसने न दिया जाए, न उसे किसी डौले-चकरोड़ से घास खोदने दी जाए और न उसे लाई-पताई या मजदूरी के लिए बुलाया जाए।"[25] लेकिन सुक्खा एक स्वाभिमानी किसान था जो अपने हृदय से फैसला करता है कि चंदन को किसी भी किंमत पर गाँव वापस नहीं बुलायेगा। वह उस पर हुए अन्याय का डटकर सामना करना चाहता है। ठाकुर हरनामसिंह द्वारा नाकाबंदी करने पर सुक्खा में स्वाभिमानी बनकर जीवन जीने की आकांक्षा जागृत हुई है इस पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए लेखक लिखते है - "सब रास्ते बंद हो गऐ लेकिन जीवन भर घृणा उपेक्षा और अपमान का शिकार होनेवाले सुक्खा में स्वाभिमान जाग गया था, उसने और भैंस पाल ली एक। ठाकुर-जमींदारों ने रास्ते बंद कर दिये तो क्या अपनी जिंदगी के रास्ते बंद नहीं होने दिये उसने।"[26] यहाँ सुक्खा में सम्मानीत और स्वाभिमानी जिंदगी जीने की चेतना उभरी हुई दिखाई देती है।

सुक्खा अपनी सदियों की गुलामी को ठुकरा कर स्वाभिमानी जिंदगी जीना चाहता है। वह जमींदारों, शोषकों का डटकर विरोध करना चाहता है। सुक्खा की पत्नी रमिया सुक्खा को जमींदारों के साथ गठ्जोड़ करने की सलाह देती हुई कहती है - "ठाकुर जमींदारों से लड़ाई लेने में कहाँ हित है। तुम क्यों नही चले जाते ठाकुर साहब के पास।"[27] लेकिन सुक्खा परंपराओं की गुलामी की जंजीरों को छेद कर इन बंधनों से मुक्त होकर स्वतंत्र बनकर विकास की ओर बढ़ना चाहता है। सुक्खा स्वाभिमान के साथ कहता है कि - "मैं मर जाऊँगा भूखा प्राण तज दूँगा। सब कुछ बर्दाश्त कर लूँगा मैं, पर चंदन को इस नर्क में नहीं पड़ने दूँगा कभी जिस नर्क मुझे रहना पड़ा है।"[28] यहाँ सुक्खा का स्वाभिमान चरमसीमा तक पहुँचा हुआ दिखाई देता है। वह सम्मानपूर्वक जीवनयापन करने के लिए हार खाना नहीं चाहता है।

'छप्पर' उपन्यास का नायक चंदन में भी यह सम्मान तथा स्वाभिमान उभरा हुआ दिखाई देता है। वह पूरे दलित समाज को उनके मुलभूत अधिकारों से जानकार करके उनके दारिद्रय के कारणों को उनके समक्ष उजागर करता है। इससे समाज में जागृति होकर दलित लोग कहते है कि "नहीं बाबू। नहीं हम हरगिज नहीं चाहेंगे कि हमारे बच्चों को भी हमारी तरह अपमान, शोषण और अन्यायपूर्ण जीवन जीना पड़े। हम चाहते हैं वे मनुष्य की तरह जिये। जो यातनाएँ हमको सहनी पड़ी है वे उनसे मुक्त हो तथा समता और स्वाभिमान का जीवन जीए।"[29]

अत: उक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि जयप्रकाश कर्दम जी के 'छप्पर' उपन्यास में सुक्खा तथा चंदन के द्वारा दलित समाज में सम्मानीत तथा स्वाभिमानी जीवन जीने के चेतना उभरी है।

7.3.7 राजनीतिक चेतना :

अंग्रेज सत्ता के दासता की जंजीरों से सन् **15** अगस्त, **1947** में मुक्त होकर स्वतंत्र राष्ट्र भारत देश का निर्माण हुआ। साथ ही देश की सरकार ने जनता का जनजीवन सुखी समृद्ध तथा सुरक्षित संपन्न बनाने हेतु भारतीय राजनीतिक संविधान में

निहित मानवतावादी मूल्य-शिक्षा स्वातंज्यता, समता, बंधुता तथा न्याय प्रावधान रखा। भारतीय संविधान में लोकतंत्रात्मक गणराज्य की कल्पना की गई जिसमें जनता के लिए अभिव्यक्ति स्वातंज्य, विचार स्वातंज्य, लेखन स्वातंज्यता का प्रावधान रखा गया। तथा बहुविध विकास योजनाओं का निर्माण किया गया। भारत के जनमानस के विकास के लिए विविधांगी प्रयत्न शुरू हुए। इस प्रक्रिया में दलित समाज को देश की परिवर्तनशील मुख्यधारा से जुड़ने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हो सका। इसके मूल में प्राचीन काल से चली आ रही रूढ़ि परंपरा से ग्रस्त वर्ण-व्यवस्था की मानसिकता थी। स्वतंत्रता तो मिली किन्तु साधारण जन सामान्य की जीवन शैली में कोई फर्क नहीं आया। स्वातंज्योत्तर राज्यकर्ता ओं ने स्वार्थ सिद्धि के हेतु प्रत्येक प्रांत में धर्म तथा जातीय भेदभाव के आधार पर राजनीति में अपना अस्तिव बनाये रखने में हथियार बनाया गया।

सवर्णो ने राजनीतिक सत्ता को अपनी बपौत्री समझकर सत्ता को काबीज करने के लिए जनशक्ति, बाहुबल, कुटनीति का भी उपयोग किया। स्वतंत्र भारत की राजनीति दिनों-दिन सामंतवादियों और पूँजीवादियों के शिकंजे में अटकती रही। भ्रष्ट राजनीति ने दलितों का शोषण कर मानवीय जीवन मूल्यों को खोखला साबित किया।

वर्तमान समय में राजनीति एक व्यवसाय का रूप धारण कर रहीं है जो सामान्य जन के हितों को तिलांजली देकर स्वयं के पद धन प्रतिष्ठा के पिछे दौंड़ रही है। राजनीति तो धनवानों, जमींदारों की गुलाम बनती जा रही है। समाज में राजनीतिक नेताओं की पदलोलुपता, स्वार्थधता, दायित्वहीनता, भ्रष्टता, अवसरवादीता, धूर्तता आदि कारणों से समाज का 'बहुजन वर्ग' यातनामयी जीवन बीताने के लिए मजबूर होता जा रहा है। वर्तमान राजनीति जनता तथा देश की प्रगति से अधिक स्वयं की प्रगति की ओर ध्यान दे रही है।

डॉ. बाबासाहब अम्बेड़कर जी ने मानवी जीवन में राजनीति को महत्त्व देते हुए दलित समाज के लोगों के जीवन में राजनीति के विशेष महत्व को उजागर किया है। डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर जी के राजनीतिक विचार दलित समाज की अस्मिता तथा

उत्थान में मेरूदण्ड की भाँति अपनी अहम भूमिका निभाते हैं। वे कहते है कि दलित वर्ग को प्राप्त संविधान द्वारा मताधिकारों के उपयोग से अपने समाज विकास हेतु संपन्न राजनीति में योग्य तथा प्रबुद्ध व्यक्ति, जो स्वयं दलित हो उसे अपने समाज का अस्तित्व बनाये रखने के लिए चयन करें। एक जनआंदोलन में उन्होंने दलित समाज के लोगों से कहा था - "घर जाकर अपने घर की दीवारों पर लिखों कि हमें सत्ताधारी जमात बनना है।" अर्थात सत्ता में आने के लिए राजनीतिक जागृति होना जरूरी है। अत: दलित समाज को भारतीय राजनीति से अटूट संबंध बनाए रखने के लिए प्रयासरत रहना चाहिए। सत्ता, पद, अधिकार की प्राप्ति संगठन के बल पर ही हो सकती है इसका ज्ञान अब दलितों को हुआ है। इसी कारण राजनीति में अपनी ताकत दिखाने के लिए शिक्षा, संगठन, संघर्ष की नीति को अपना रहा है। इस विवेचन का प्रतिबिंब हमें छप्पर उपन्यास में मिलता हैं। 'छप्पर' उपन्यास का शिक्षित दलित युवक चंदन अपने समाज के विकास के लिए प्रयत्नशील है। वह स्वयं की पढ़ाई करते हुए गरीब दलित समाज के वच्चों को पढ़ाने के लिए स्वयं का स्कूल निकालकर उन्हें पढ़ाता है। चंदन समाज व्यवस्था के प्रस्थापित राजनीति को जानता है तथा दलित समाज के विरूद्ध अपनायी जानेवाली दुहरी राजनीति को भी जानता है। वह कहता है -"मैं वाणी दूँगा उनकी एक जबान को। पढ़-लिखकर हमारे समाज के लोग ऊपर नहीं उठेंगे तो हमें ही कौन पूछेगा। हम थोड़े से लोग चीख-चीखकर मर जाएंगे कौन सुनेगा हमारी चीख को हमें समाज से टक्कर लेनी है, सत्ता से लड़ाई लड़नी है, जुल्म और शोषण के विरूद्ध संघर्ष करना है। हम सबके लिए फौज चाहिए वह फौज तैयार करूँगा मैं।"[30] इससे स्पष्ट होता है कि, चंदन दलितों को संगठित करके उनका प्रतिनिधित्व करता है।वह संगठन की ताकत से सत्ता को पलटना चाहता है। राजनीति में दलितों का अहम सहभाग होने पर ही दलित समाज विकसित हो सकता है, इस पर यहाँ संकेत दिया है।

7.3.8 समाज कार्य से उत्पन्न चेतना :

डॉ.बाबासाहब अम्बेड़कर कहते थे कि इस मेरे दलित समाज को दृढ़,

संकल्पी, निष्ठावान तथा निस्वार्थ कार्य करनेवाले समाज सेवक चाहिए। अत: बड़ा या विद्वान तथा बुद्धिमान व्यक्ति उसे कहा जाएँ जिसकी विद्वता तथा बुद्धि समाज हितों के लिए काम आए।

जयप्रकाश कर्दम जी के 'करुणा' उपन्यास का पात्र 'रमेश' एक अध्यापक है। वह सामाजिक कार्यों में सक्रिय है। धामपुर गाँव में एक प्रतिष्ठित तथा सरपंच ठाकुर सुखदेव का बेटा सूरज उसी गाँव के एक दलित लड़की पर बलात्कार करने का प्रयास करता है। रमेश इसके खिलाफ आवाज उठाता है। वह कहता है - "मैं अन्याय के विरूद्ध चुप होकर नहीं बैठ संकता।"[31] रमेश समताधिष्ठित समाज निर्माण के बारें में सोचता है कि- "ऐसा समाज जो न्याय, समता और भातृत्व की भावनाओं पर आधारित हो। जहाँ शोषण न हो, जोर जवरदस्ती न हो अन्याय न हो। जिस समाज के मनुष्यों का नैतिक चरित्र ऊँचा हो। जहाँ स्वार्थपरता न हो, धोखेबाजी न हो, भ्रष्टाचार न हो, तथा जहाँ नेताओं और सरकार का एक मात्र उद्देश्य 'बहुजन हिताय - बहुजन सुखाय' हो।"[32] अत: रमेश अपने जीवन की सारी शक्ति और सारी उर्जा आदर्श समाज निर्माण करने के लिए समर्पित करने का दृढ निश्चय करता है तथा इस महान कार्य का आरंभ भी करता है।

'जयप्रकाश कर्दम जी के 'छप्पर' उपन्यास का चंदन एक दलित मजदूर किसान का लड़का है। चंदन उच्चशिक्षित दलित युवक तथा डॉ.वाबासाहव अम्बेड़करजी के विचारों का अनुयायी है। चंदन अपने सामाजिक दायित्व के प्रति सचेत है। वह अपने दलित समाज को शिक्षित कर उनमें संगठन के साथ-साथ न्याय के लिए चेतना भरता है। चंदन दलित समाज के सुधार हेतु कार्य के बारे में दिन-रात सोचता है। हजारों सालों से रूढ़ि-परंपरा, धर्म, ईश्वर के नाम पर शोषित दलित समाज की पीड़ा को चंदन ने महसूस किया है, वह उनकी हीन-दीन दशा देखकर कहता है कि "सदियों से अज्ञान और पिछड़ेपन की गर्त में पड़ा रहा है हमारा समाज। मेरा प्रयास है कि समाज से यह अज्ञान और पिछड़ापन दूर हो तथा निराशा और अंधकार के साए में जी रहें समाज

में आशा और विश्वास पैदा हो। यदि मेरे समाजकार्य के प्रयास से मेरे पद्दलित समाज का कुछ भला हो सका तो में स्वयं को धन्य समझूँगा और उसके लिए खुशी-खुशी अपना सब कुछ त्यागने को तैयार हूँ मैं।"[33]

अत: इस उपन्यास का पात्र चंदन वर्तमान दलित यवकों के लिए प्रेरणादायी है। वह स्वयं से बढ़कर अपने समाज की प्रगति को प्राथमिकता देता है। चंदन सामाजिक क्रांति का प्रतीक बनकर समताधिष्ठित समाज निर्माण के लिए अपना सर्वस्व दांव पर लगाता है।

अत: जयप्रकाश कर्दम जी के विवेच्य उपन्यास 'करुणा' और 'छप्पर' के दोनों नायक सामाजिक दायित्व के प्रति सजग हैं। अर्थात वर्तमान समय में भी समाज को सही दिशा में मार्गदर्शन कर उनकी उन्नति हेतु युवा शक्ति को प्रेरणा देते हैं। यहा दोनों नायकों में दलित समाज कार्यसंबंधी उभरी हुई चेतना देखने को मिलती हैं।

7.3.9 धर्मपरिवर्तन चेतना :

प्राचीन काल से समाज व्यवस्था में चली आ रही चातुवर्ण्य व्यवस्था जो आज भी इसकी जड़े समाज में मौजूद हैं। ये मानवतावादी मूल्यों को विषाक्त बना रही हैं। समाज में व्याप्त अशिक्षा, अज्ञान के कारण धर्म के नाम पर पंडित पुरोहित निम्न वर्ग के जन जातियों का शोषण करना अपना अधिकार मानते हैं। धर्म का सदियों पुराना परंपरागत रूप समाज से विलुप्त हो चुका है। सच्चाई यह है कि धर्म मूलत: जीवन जीने की कला है। धर्म जीवन को सदाचार का मार्ग दिखाता है। और मनुष्य के आचरण पर नियंत्रण भी रखता है। डॉ.हरदेव बाहरी जी का 'धर्म' के विषय का मन्तव्य उल्लेखनीय है कि "धर्म वह मंदिर है, जिसमें हमारें आदर्शो के दीप जलते हैं, जिनके प्रकाश में हम मन का संतोष, आत्मा का साक्षात्कार और जीवन के सुंदर लक्ष्य का स्वरूप देखते हैं।"[34]

धर्म इन बातों का संकेत है कि मानवतावादी मूल्यों का संचय धर्म में निहित हो, धर्म मानवी जीवन को सदाचार का मार्ग दिखाकर मनुष्यों के आचार-विचारों में समता, बंधुता तथा स्वतंत्रता स्थापित करता हैं। अर्थात धर्म मानव में आस्था कर्त

व्यबोध, संयम, नैतिकता, सहिष्णुता, विवेक, अनुशासन आदि को भर देता है। डॉ.बाबासाहब अम्बेड़कर कहते हैं कि धर्म मानव के लिए हो न कि मानव धर्म के लिए नहीं। मानव जीवन पर धर्म एवं संस्कृति का प्रभाव रहा है। मानव अपनी सभ्यता, परंपरा, रूढ़ि को संस्कृति के बल पर सुरक्षित रखता है। धर्म वह शक्ति होती है, जो मनुष्य को अपने कर्तव्य बोध से ज्ञात कराती है उसे सही रास्ता दिखाती है।

सनातन धर्म की शोषण नीति से उबकर डॉ.बाबासाहब अम्बेड़करने समतावादी बौद्ध धम्म की तलाश की और अपने लाखों बांधवों के साथ उसको स्वीकार किया। यह धर्मांतर **14** अक्तुबर **1956** में नागपुर में हुआ। इसी पृष्ठभूमि पर जयप्रकाश कर्दम जी ने 'करुणा' उपन्यास में धर्मांतर का प्रश्न खड़ा किया है। इसमे गौतम बौद्ध की विचारधारा से प्रभावित होकर उपन्यास की नायिका 'करुणा' बौद्ध धम्म की दीक्षा लेकर समाज कल्याण में अपने-आपको समर्पित कर बुद्ध के विचारों की अनुयायी बनकर समताधिष्ठित मानवतावादी समाज निर्माण के कार्य में सक्रिय रहती है।

'करुणा' एक मध्यवर्गीय परिवार के टैक्सी ड्राईवर की इकलौती संतान है। वह धर्म से ब्राह्मण थी और घर में सारे धार्मिक अनुष्ठान ब्राह्मण द्वारा ही संपन्न होते थे। 'करुणा' एक शिक्षित युवती है। वह युवावस्था में एक शिक्षित दलित युवक रमेश की ओर आकर्षित होती है। उसे अपना जीवन साथी बनाना चाहती है। किन्तु कुछ ही दिनों में रमेश आर्थिक स्थिति से तंग आकर एक स्कूल में अध्यापक की नौकरी के लिए भ्रष्ट राजनीति के नसबंदी शोषण का शिकार बनता है। तथा उसे अपनी बहन की हत्या के झूठे अभियोग में जेल जाना पड़ता है। एक भीषण अपघात में उसके कटीप्रदेश पर आघात के पश्चात आजीवन अविवाहित रहने के लिए अभिशाप होता है। इससे करुणा अपने तथा रमेश के भविष्य की आशा-आकांक्षा को टूटते देखकर स्वयं भी सांसारिक तथा भौतिक जीवन का त्याग करके समाज परिवर्तन तथा समाज कल्याण में अपने-आपको समर्पित करती हैं।

'करुणा' गौतम बुद्ध के समता, स्वतंत्रता, बंधुता, न्याय इन मानवतावादी मुल्यों से निहित धम्म से प्रभावित होकर बौद्ध धम्म की दीक्षा लेती है। वह बुद्ध की शिक्षाओं को समाज में प्रसारित करने में जूट जाती है। 'करुणा' कहती है "यही ऐसा रास्ता है जिस पर चलकर अपना भी तथा समाज के दूसरे लोगों का भी कल्याण किया जा सकता है। सुख और शांति की ओर ले जानेवाला यही मार्ग मुझे उचित लगा और मैंने भौतिक जीवन का मोह त्याग कर चीवर धारण कर लिया।"[35]

अत: गौतम बुद्ध की शिक्षाएँ पंचशील, आर्य, आष्टांगमार्ग में निहित मानवतावादी मूल्यों से प्रभावित होकर 'करुणा' बौद्ध धम्म की दीक्षा लेकर जीवन से निराश, पराजित और टूटे हुए लोगों का दु:ख दूर कर उन्हें जीवन की सही दिशा का बोध कराना अपने जीवन का उद्देश्य निश्चित करती है। वह अम्बेडकरी विचार धारा की अगली कड़ी बनकर बौद्ध धर्म के समता, स्वतंत्रता, बंधुता, न्याय से परिपूर्ण तत्वज्ञान को समाज में प्रवाहित करना चाहती हैं।

निष्कर्ष ः

जयप्रकाश कर्दम ने विवेच्य उपन्यासों में दलित समाज में वैचारिक जागृति के विविध पहलुओं को उजागर किया है। इन रचनाओं में लेखक ने दलितों के बींच की चेतना, आर्थिक चेतना, नारी चेतना, शिक्षा चेतना, धार्मिक चेतना, सम्मानित तथा स्वाभिमानी जिंदगी जीने की चेतना, राजनीतिक चेतना, समाजकार्य से उत्पन्न चेतना धर्म परिवर्तन की चेतना आदि का चित्रण करके दलित समाज में इन विविध आयामों से निर्मित्त चेतना पर गहराई से चिंतन किया है। जयप्रकाश जी ने दलित जन-जीवन में निर्मित बहुआयामी चेतना के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि आज दलित समाज में चेतना निर्मिति एक आवश्यक अंग है। समाज जब सुस्त पड़ा रहता है, बोधा बनकर सुस्त जीवनयापन करने लगता है, तब उसपर चारों तरफ से आक्रमण होते हैं। अन्याय, अत्याचार, शोषण, उत्पीड़न, उपेक्षा, असम्मान आदि से युक्त जीवन जीना पडता है। अन्याय का जवाब यदि विद्रोह से देने के लिए एकाध समाज या व्यक्ति तत्पर होता है

तब उसके विकास के सारे रास्ते खुल जाते हैं। भारत के दलित समाज की यहीं हालत थी और आज भी है। भारतीय संविधान में दलितों के लिए जो हक्क और अधिकार दिए गए हैं। इनकी प्राप्ति समाज के सवर्ण लोग दलितों को होने नहीं देते है। वे बार-बार इनके अधिकारों पर आक्रमण करते हैं। दलितों के विकास में रोड़े अटकातें है। दलितों का विकास इन्हें खलने लगता है। दलितों की सुंदर औरतों की अस्मत को वे लुटते है। दलितों को बिना पारिश्रमिक उनसे बेगार लेते हैं, समाज विकास की धारा से उन्हें अछूते रखते हैं, राजनीति से दूर रखते है, दलितों पर अधिकार जताना अपना परम अधिकार मानते हैं। उन्हें धर्म की चक्की में पीसकर डराते धमकातें हैं। उन्हें सम्मान का और स्वाभिमान का जीवन जीने नहीं देते है। वर्ण व्यवस्था के आधार पर उनका विकास कुंठित करते है। इन सभी प्रकार के शोषण चक्र से बचने के लिए दलितों में चेतना भरना उन्हें आत्मनिर्भर बनाना, अपनी अस्मिता की सुरक्षा करके स्वाभिमानी बनाना, स्त्रियों की अस्मत को सुरक्षित रखने के लिए प्रयत्न करना, सवार्णो की बौनी मानसिकता का खंडन करना, धार्मिक पाखंडी शोषण से मुक्ति पाना, दलित समाज विकास के लिए समाजहितैषी समाजकार्य का अवलंब करना, राजनीति में आवश्यक सहभाग प्राप्त करा लेना इन सभी बातों के लिए दलितों में चेतना निर्माण करने की आवश्यकता है।

विवेच्य उपन्यासों का चंदन और रमेश दलित समाज में चेतना निर्मिती के कार्य में लगे रहे हैं। संगठन के बल पर परंपरा से चली आयी बाधक रूढ़ियों को ध्वस्त करना चाहते हैं। गाँव जीवन में स्थित सवर्णो के वर्चस्व को कम करने के लिए आवश्यक और उचित प्रयत्न करते हैं। सामाजिक विषमता के पहाड को यदि तोड़ना है तो दलितों में चेतना निर्माण पर वे जोर देते हैं। सुक्खा, हरिया जैसे दलित मजदूर भी चेतित होकर आत्मसम्मान, स्वाभिमान का रास्ता तय करते हैं। दलित बलात्कार ग्रस्त युवती कमला बलात्कार से उत्पन्न अवैध संतान को जन्म देकर उसका लालन-पालन करके सवर्ण आतंककारियों का बदला लेने की भावना से चेतित होती है। रमेश कैदियों के संगठन से झुठें इल्जाम में फँसाये लोगों को मुक्त करने के लिए चेतित हो उठता है।

करुणा सवर्ण होकर भी परंपरागत धर्म की दृष्टता पर प्रश्नचिह्न लगाकर चेतित बनकर धर्मांतर करती है। स्पष्ट है कि दलितों में चेतना जागृति के सिवा उनका उद्धार तथा विकास नहीं हो सकता। इस तथ्य को जयप्रकाश कर्दम जी ने विवेच्य उपन्यासों के आधार पर स्पष्ट कर दिया हैं।

संदर्भ संकेत ः

1.	श्री नवलजी -	'नालन्दा विशाल शब्द सागर कोश'	पृ.568
2.	रामचंद्र वर्मा -	'मानक हिंदी शब्द कोश'	पृ.35
3.	गणोरकर प्रभा -	'मराठी वाङ्मयीन संज्ञा संकल्पना कोश'	पृ.198
4.	डॉ.सुमनासार -	'दलित साहित्य और उसकी सीमाएँ'	पृ.10
5.	डॉ.मोहनदास नैमिशराय -	'साहित्य और संस्कृति में दलित अस्मिता और पहचान का सवाल 'नयापथ'	पृ.104 5
6.	श्री नवलजी -	'नालन्दा विशाल शब्द सागर कोश'	पृ.368
7.	संपा.गो.प.नेने श्रीपाद जोशी-	'बृहत् मराठी हिंदी शब्द कोश'	पृ.314
8.	A.A. HORHBY -	'OXFORD DICTIONARY'	पृ.180
9.	संपा.डॉ.नगेन्द्र -	'भारतीय साहित्यकोश'	पृ.405
10.	डॉ.धीरेंद्र वर्मा -	'हिंदी साहित्यकोश'	पृ.19
11.	कुमारी पिया अम्बिका -	"भैरव प्रसाद गुप्त के उपन्यासों में सामाजिक चेतना' पृ.39	
12.	जयप्रकाश कर्दम -	'छप्पर'	पृ.42
13.	वही		पृ.39
14.	डॉ.शशीभूषण सिंहल -	'हिंदी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ'	पृ.99
15.	सं.रतनकुमार पाण्डेय -	'अनभै', दिसंबर 2004	पृ.21
16.	जयप्रकाश कर्दम -	'छप्पर'	पृ.50
17.	महादेवी वर्मा	'श्रृंखला की कड़ियाँ'	पृ.11
18.	जयप्रकाश कर्दम -	'छप्पर'	पृ.51
19.	वही -		पृ.41

20.	सं.रतनकुमार पाण्डेय	-	'अनभै',वर्ष-1, अंक- 4	
			अक्तुबर-दिसंबर 2004	पृ.19
21.	प्रा.मा.म.देशमुख	-	'बहुजन समाज और परिवर्तन'	पृ.43
22.	जयप्रकाश कर्दम	-	'छप्पर'	पृ.40
23.	वही	-		पृ.31
24.	वही	-		पृ.18
25.	वही	-		पृ.17
26.	वही	-		पृ.17
27.	वही	-		पृ.35
28.	वही	-		पृ.35
29.	वही	-		पृ.35
30.	वही	-		पृ.35
31.	जयप्रकाश कर्दम	-	'करुणा'	पृ.20
32.	वही	-		पृ.78
33.	जयप्रकाश कर्दम	-	'छप्पर'	पृ.42
34.	डॉ.हरदेव बाहरी	-	'प्राचीन भारतीय संस्कृति कोश'	पृ.8
35.	जयप्रकाश कर्दम	-	'करुणा'	पृ.71